वेदकालीन आर्यों की घरेलू चीजों

डो. रघु पटेल
अध्यापक,
भवन्स आर्टस एन्ड कोमर्स कोलेज, डाकोर

वैदिक घरों में नित्य काम में आनेवाली चीजें सीधी-सादी उपयोगी तथा नाना प्रकार की हैं । उनके प्रयोग करने से उस समय की उन्नत भौतिक दशा का परिचय भली-भाँति लगता है । बैठने तथा लेटने के अनेक आसनों का वर्णन मिलता है जो सामाजिक अवस्था की उन्नति के साथ-साथ सीधे-सादे से अलंकृत और परिष्कृत होते गये हैं । याज्ञिक अनुष्ठान के अवसर पर कुश के बने हुए 'प्रस्तर ',' बर्हि 'तथा 'कूर्च 'का उपयोग किया जाता था । बैठने तथा लेटने के लिये चटाईयाँ बनाई जाती थीं ।'कशिपु '(सेज) पत्थर से कूट कर तैयार नरकट (नड) से तथा 'कट' (बेंत) से बनाई जाती थी । समाज के धन सम्पन्न होने पर इन चटाइयों में सोने-चाँदी की सम्भवतः झालर लगाने की चाल पीछे चल पडी थी। राजा के अश्वमेध के अवसर पर जिस 'हिरण्यकशिपु' (सोने की चटाई) पर बैठने की चाल थी वह अवश्य ही सोने के सूतों से बनी हुई बहुत ही चमकीली होती थी ।

(१) तल्प- वैदिक काल के अनतःपुर में स्त्रियों के वास्ते अनेक प्रकार के बिस्तर और आसन काम में लायें जाते थे । ऋग्वेद के मन्त्र में 'तल्प', 'प्रोष्ठ' तथा वह्य पर लेटकर आराम करनेवाली स्त्रियों का उल्लेख किया गया है । ये तीनों आसन थे जो अपनी रचना और सजावट के कारण भिन्न भिन्न हुआ करते थे । 'तल्प' साधारण खटिया न होकर वह बेशकीमती पलंग है, जिस पर वर-वधू नव समागम के शुभ अवसर पर सोते-बैठते थे । अथर्ववेद के विवाहसूक्त में [१] वधू को प्रसन्नचित्त होकर 'तल्प' पर आरोहण करने तथा पति के लिए प्रजा उत्पन्न करने का मंगलमय उपदेश दिया गया है । शतपथ ब्राह्मण (१३-१-६-२)में नियमतः उत्पन्न पुत्र की ताल्प संज्ञा दी गई है तथा छान्दोग्य में पंच पातकियों में गुरुतल्प-सेवी की भी गणना है [२] इससे स्पष्ट है कि 'तल्प' वैवाहिक शय्या है, जिस पर आरोहण करने का अधिकार वर-वधू को ही है पवित्र उदुम्बर (गुलर) की लकडी से इसके रचना-विधान से भी इसी बात की पुष्टि होती है ।

(२) प्रोष्ठ- ऋग्वेद बडे महल (हर्म्य) में 'प्रोष्ठ' पर लेटनेवाली स्त्रियों का उल्लेख करता है [३]। यह बडा, ऊँचा ,काठ का बना बेंच जान पडता है । इसके सुडौल बने दो पैर होते थे और सम्भवतः दीवाल का सहारा लेकर यह खडा किया जाता था । अथर्ववेद के एक मन्त्र से जान पडता है कि वधू को अपने पति के घर जाने के समय तकिया तथा तेल के साथ एक पेटी दी जाती थी [४] । बहुत सम्भव है कि

वह कोश (पेटी) इसी प्रोष्ठ के रूप में होती हो जो पेटी और तकियादार पलंग दोंनो का संमिश्रण सा जान पडता है ।

(३) वह्य- यह स्त्रियोपयोगी सुखद आसन था । वह्य शब्द से प्रतीत होता है कि यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर ढोकर लाया जाता था । बहुत सम्भव है कि इसके दोंनो और बाँस लगे रहते थे और ऊपर चँदवे से ढका रहता था । आजकल की डोली या पालकी वैदिक वह्य की अर्वाचीन प्रतिनिधि जान पडती है । अथर्ववेद के अनुसार वधू थक जाने पर 'वह्य' पर चढती थी [५] । एक दूसरे सूक्त में' वह्य' का उपयोग विवाह के अवसर पर किये जाने का उल्लेख है । वह्य लकडी की बनी होती जिस पर नाना प्रकार की रमणीय आकृत्तियाँ खोदी जाती थीं और सुनहली कलाबत्तू की गई चादर बिछाई जाती थी [६] । इतनी कीमती शय्या पर वधू वर के साथ विवाह के अवसर पर सोती थी । आसन्दी का भी विवाह के अवसर पर उल्लेख मिलता है, परन्तु 'वह्य' आसन्दी तथा तल्प दोनों से भिन्न बेशकीमती तथा सुसज्जित पलंग जान पडता है, जो आवश्यकतानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी डोली के समान लाया जाता था ।

(४) आसन्दी- ऋग्वेद में आसन्दी का उल्लेख नहीं है, परन्तु अथर्ववेद १५-३, वाजसनेयी संहिता ८-५६, ऐतरेय ब्राह्मण तथा शतपथ ब्राह्मण में इसका विस्तृत वर्णन तथा उपयोग उपलब्ध होता है । इन ग्रन्थों के अनुशीलन से राजा-महाराजाओं के द्वारा अभिषेक आदि विशेष अवसरों पर प्रयुक्त यह एक आराम देनेवाली गद्दी या गद्दादार आराम-कुर्सी जान पडती है । पर्यंक आसन्दी का ही विस्तृत रूप था, जिसे धनाढय लोग - शाशक वर्ग बैठने और सोने दोनों काम के लिए प्रयोग में लाते थे । 'आसन्दी' राज्यसिंहासन सी प्रतीत होती है और वैदिक निर्देशों के अनुशीलन से उसकी निर्माणविधि का भी पर्याप्त परिचय मिल जाता है ।

अथर्ववेद १५-३ में व्रात्यों (वैदिक धर्म से बहिष्कृत आर्यो) की आसन्दी का विशिष्ट वर्णन मिलता है- उसके चार पैर होते थे, दो आगे और दो पीछे; लम्बे तौर से दो काठ लगाये जाते थे, दो तीरछे तौर पर; लम्बाई और चौडाई में वह तन्तुओं से बिनी जाती थी । और उसके ऊपर होती थी एक चादर (आस्तरण), तकिया (उपबर्हण), गद्दादार आसन (आसाद) और सहारा लेने की जगह (उपश्रय) । विवाह में प्रयुक्त 'आसन्दी ' का विशेष वर्णन नहीं मिलता । शुक्ल यजुर्वेद में भी आसन्दी का सम्बन्ध राजाओं के साथ है, राजसन्दी शब्द से जान पडता है कि साधारण जनता भी अपने बैठने के लिये साधारण 'आसन्दी ' का प्रयोग किया करती थी । ऐतरेय ब्राह्मण ८-५-६ और शतपथ ब्राह्मण ५-४-४-१ में राज्याभिषेक के अवसर पर 'आसन्दी ' के अंगप्रत्यंग का विस्तृत सूक्ष्म वर्णन मिलता है, जिससे अलंकारों से सुसज्जित राज्यसिंहासन की विशिष्टता तथा गौरव का परिचय भलीभाँति हमें मिलता है [७] ।

नाना प्रकार की घरेलू वस्तुओं के रखने के लिए मिट्टी और धातु के बने 'कलश ', लकडी के बने ' द्रोण ', चाम के बने 'दृति ' का प्रयोग प्रत्येक घर में होता था । सोने तथा चाँदी के बने चषकों (प्यालों) का प्रयोग धनाढय आर्यजनों के महलों में किया जाता था । यज्ञ के अवसर पर हविष्य के पकाने के लिए ' उखा ' तथा घरेलू अवसरों पर पकाने के लिए 'स्थाली' काम में लाई जाती थी । जाँत (हृषत तथा उषल) से अनाज पीसे जाते थे । काठ के बने हुए ओखल (उलूखल) तथा मूसूर (मूषल) से अनाज को या सोमलता के कूटने का काम लिया जाता था । सूप (शूर्ष) तथा चलनी (तितउ) से भूसी के नाज को अलग किया जाता था । तैयार नाज को नापने वाला बर्तन 'ऊर्दर ' कहलाता और उसकी सहायता से मापा गया नाज भाण्डार (स्थीवि) में रखा जाता था । आवश्यकता के अनुसार स्थीवि से अनाज निकाला जाता और काम में आता । चीजों को बचाने के लिए उन्हें शिक्य (छीका) पर लटका कर रखने की चाल उस समय में भी थी [८]। धातु या मिट्टी के बर्तनों में सोने या चाँदी के सिक्के भर कर रखे जाते और रक्षा के लिए उन्हें जमीन के नीचे गाडा भी जाता था [९] । इन वस्तुओं के अतिरिक्त स्रुव, जुहू आदि यागोपयोगी वस्तुयें भी प्रत्येक घर में याज्ञिक अनुष्ठान के निमित्त रखी जाती थीं । आर्य घरों में दास दासियों की कमी न रहती थी, जो अपने मालिक के लिए जरूरी काम करने में लगे रहत थे । दासियों आर्य गृहपत्नीयों को उनके घरेलू कामों में सहायता दिया करती थीं । वैदिक आर्यो के घरेलू चीजों तथा सामान को सरसरी निगाह से भी देखनेवालों के लिए यह स्पष्ट है कि जीवन को सुखमय, सरस बनानेवाली आवश्यक सामग्री वैदिक घरों में नित्य सन्निहित रहती थी, जिससे आर्यो का जीवन सादगी के साथ-साथ आनन्दोल्लास से भरा रहता था । वैदिक घर सादगी के पुतले थे, इसे मानने में किसी को आपत्ति न होनी चाहिए ।

पादटीप

(१) आरोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्य अस्मै । अथर्ववेद १४-२-३१
(२) स्तेनो हिरण्यस्य सुरां पिवँश्च गुरोस्तल्पमावसन ब्रह्महा च ।
एते पतन्ति चत्वारः पंचमश्चाचरँस्तैरिति ।। छान्दोग्य ५-१०-९
(३) प्रोष्ठशया - ऋग्वेद ७-५५-८
(४) चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यंजनम ।
द्यौर्भूमिः कोश आसीत यदयात सूर्या पतिम ।। अथववेद १४-१-६
(५) सा भूमिमा रुरोहिथ वह्यं श्रान्ता वधूरिव । अथर्ववेद ४-२०-३
(६) प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः ।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि ।। ऋग्वेद ७-५५-८
(७) रुक्मप्रस्तरणं वह्यं विश्वा रूपाणि बिभ्रतम ।
आरोहत सूर्या सावित्री बृहते सौभगाय कम ।। अथर्ववेद १४-२-३०
(८) अथर्ववेद ९-३-६
(९) हिरण्यस्येव कलशं निखातम । ऋग्वेद १-११७-१२